शोध मंथन, Impact Factor 6.726 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255 (e): 2454-339X
Vol. X, No.III, pp (961-968) July - Sep. 2019

यज्ञदत्त शर्मा के उपन्यासः उद्देश्य एवं जीवन–दर्शन–निरूपण

डॉ0 मंजरी वर्मा
409 गंगा हाईट्स, गंगासागर,
गंगानगर मेरठ
Email: narendra.p@uttarpradeshtv.in

सारांश

उपन्यासों की तात्त्विक समीक्षा में उपन्यास–रचना के प्रमुख तत्त्व 'उद्देश्य' का भी अलग स्थान है। रचनाकार इसी के आश्रय से जहाँ समाज को उचित दिशा देता है, वहीं रचना में अभिव्यक्त जीवन–दर्शन के माध्यम से एक ऐसी दृष्टि प्रदान करता है, जिसे अपनाकर समाज सुसंगठित एवं सुव्यवस्थित होता हुआ विकास के पथ पर अग्रसर होता है। विभिन्न कालों में समाज का रूप कैसा हो, इसकी उचित अभिव्यंजना रचनाकार जीवन–दर्शन के द्वारा ही करता है। इस विचार से रचना के उद्देश्य एवं जीवन–दर्शन का भी सम्यक् विवेचन अपेक्षित है। इसी के द्वारा कृति की सार्थकता एवं उपादेयता का मूल्यांकन किया जाना सम्भव है। अन्य सभी तत्त्व कृति के किसी एक अथवा दो पक्षों को उद्घाटित करते हैं, पर यह तत्त्व कृति का समग्र विश्लेषण करते हुए उसके अस्तित्व को प्रतिष्ठा देता है। सम्पूर्ण रचना की सफलता इस पर अवलम्बित है चूँकि इसके माध्यम से पाठक या श्रोता का तादात्म्य स्थापित होता है और कृति एवं कृतिकार के कालजयी एवं व्यापक रूप का अभिज्ञान होता है।

प्रस्तावना

1. उद्देश्य की अर्थवत्ता

प्रत्येक कर्म सोद्देश्य होता है। अतः साहित्यकार का कर्म साहित्य–रचना का भी कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। डॉ0 विजयेन्द्र स्नातक ने ठीक ही कहा है कि स्वतन्त्र मानस एवं सृजन–शक्ति–सम्पन्न कोई भी कलाकार यह स्वीकार नहीं करता कि साहित्य–सृजन निरुद्देश्य या निरर्थक सृष्टि है।(01) भारतीय एवं पाश्चात्य चिन्तकों ने काव्य या साहित्य–प्रयोजनों पर विचार व्यक्त करते हुए उद्देश्य की सार्थकता को अंगीकार किया है। संस्कृत–आचार्यों ने 'अनुबंध–चतुष्ट्य' के अन्तर्गत ग्रन्थ–रचना के प्रयोजन का उल्लेख करते हुए उसका महत्त्व प्रतिपादित किया। नाटककार भरतमुनि से लेकर अद्यतन संस्कृत आचार्यो की मान्यता है कि काव्य या रचना का कोई न कोई प्रयोजन अवश्य होता है। आचार्य मम्मट द्वारा उल्लिखित काव्य–प्रयोजनों में सभी के मतों का समाहार हो जाता है। अतः उनके विचारों में जिन छह काव्य–प्रयोजनों (02) का वर्णन किया गया है, भले ही वे कवि, सहृदय तथा दोनों की दृश्टि से पृथक्–पृथक् कर दिये गये हैं, पर रचना की दृष्टि से उन पर एक साथ चिन्तन अपेक्षित है।

हिन्दी–साहित्य में भी काव्य–प्रयोजन का उल्लेख हुआ है। स्वान्तः सुखाय रचना करने वाले गोस्वामी तुलसीदास ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया कि काव्य–रचना का उद्देश्य होता है। उनके विचार में गंगा के समान सबका हित करने वाली रचना ही रचना है –

कीरति भनिति भूति भली सोई। सुरसरि सम सबकर हित होई।। (03)

यथार्थतः साहित्य का मुख्य उद्देश्य आनन्द प्रदान करना है और इसी में सभी उद्देश्यों का समाहार हो जाता है, लेकिन मानवता एवं जनकल्याण का सन्देशवाहक साहित्य अपने उद्देश्य को तभी सार्थक सिद्ध कर सकता है, जब उसमें सत्य, शिव एवं सुन्दर की समन्वित अभिव्यक्ति हो। यद्यपि साहित्य के सभी रूपों में इसकी अभिव्यंजना होती है, पर उपन्यास के विस्तृत फलक पर इसे चित्रित करने में अधिक अवसर मिलता है। केवल मनोरंजन करने के उद्देश्य से लिखे गये साहित्य की कोई महत्ता नहीं है। जब तक कि उससे आनन्द की प्राप्ति न हो और साथ–साथ उसमें किसी उपदेश नीति, शिक्षा एवं आदर्श आदि का आख्यान न किया गया हो। यहाँ यह ध्यातव्य है कि साहित्य का उद्देश्य केवल उपदेश देना भी नहीं है। यदि ऐसा होता, तो आचारशास्त्र के ग्रन्थों को भी साहित्य कहा जाने लगता है जैसा कि विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने कहा है– यदि काव्य–रचना का चरमोद्देश्य लोकोपदेश होता तो पद्यबद्ध आचारशास्त्र के ग्रन्थ काव्य ही कहे जाते। 'चाणक्य–नीति' को किसी ने काव्यग्रन्थ नहीं माना। (04) इस प्रकार साहित्य एक ऐसा व्यापक फलक है, जिसमें सम्पूर्ण मानव–जीवन का चित्रण होने से आनन्द एवं उपदेश दोनों का मिला–जुला रूप रहता है।

हेनरी जेम्स के अनुसार– ''उपन्यास के अस्तित्व का एकमात्र कारण यही है कि वह जीवन का प्रतिनिधित्व करने का प्रयत्न करता है। जब वह इस प्रयत्न को त्याग देता है, उसी प्रयत्न को जिसे हम चित्रकार के कैनवास पर देखते हैं, तब वह एक विलक्षण परिस्थिति से घिर जाता है। चित्रकार के चित्र से यह आशा नहीं की जाती कि वह स्वयं को इतना सामान्य कर देगा कि भुला दिया जाये और चित्रकार की कला तथा उपन्यासकार की कला में, जहाँ तक मैं समझता हूँ, पूर्ण समानता है। उन दोनों की प्रेरणा समान है, उनकी प्रणाली विभिन्न प्रकार के दृष्यों का प्रयोग करने की समान एवं उनकी सफलता भी समान है। वे एक–दूसरे से सीख सकते हैं तथा एक–दूसरे की व्यवस्था एवं रक्षा कर सकते हैं। उनके कारण समान हैं तथा एक का सम्मान दूसरे का सम्मान है।''(05)

2. यज्ञदत्त षर्मा के उपन्यासों में निरूपित उद्देश्य

कल्पना का लोक शर्मा जी के साहित्य में नहीं है। वे सत्य एवं यथार्थ की उपेक्षा न करा ईमानदारी से उनकी ठोस भूमि को अपने उपन्यास में प्रस्तुत करते हैं। इसलिए 'दबदबा' का पात्र कहता है– ''मैं ऐसी दुनिया में आबाद नहीं होना चाहता जो ख्बाब की जमीन पर आबाद हो। आपकी दुनिया अगर वास्तविक दुनिया की जमीन पर नहीं बसायी जायेगी तो आसमान में टँगी रह जायेगी और यह पवित्र जमीन कभी इस दुनिया को अपनी गोद में संभालने का सौभाग्य प्राप्त नहीं कर सकेगी।''(06)

श्री यज्ञदत्त शर्मा के साहित्य को स्पष्ट रूप में 'सत्साहित्य' कहा जा सकता है। शर्मा जी के शब्दों में 'सत्साहित्य' हम उसे मानते है, जो मानव समाज को कर्त्तव्य, साहस और उत्साह की प्रेरणा दें, संकुचित मनोवृत्तियों के विनाश और व्यापक दृष्टिकोण के विकास का साधन जुटाए, रूढ़िवादी अवरोधों के विध्वंस और प्रगतिशील तत्त्वों के विकास को बल दे, संगठन, सहयोग और समानता का पक्षपाती हो, दया, प्रेम और सद्भावना का व्यापक संदेश वहन करें तथा उसमें राष्ट्रीय जीवन का सही विश्लेषण, चिन्तन और मनन हो, राष्ट्रीय जीवन की समस्याओं का समाधान हो। सत्साहित्य विश्वबन्धुत्व की भावना से पूर्ण होना चाहिए और सबसे अन्त में यहीं कहेंगे कि सही इंसान के जीवन का सीधा, सच्चा और सही चित्र हो वह।'' (07) इस कथन से स्पष्टतः राष्ट्रीय चेतना, जागरण और शिक्षा तथा सत्प्रेरणा आदि को साहित्य का मूलभूत उद्देश्य कहा जा सकता है। इसी उद्देश्य के व्यापक प्रसार में उनका सम्पूर्ण साहित्य कटिबद्ध है।

'रूप–बिरूप' में लेखक ने मुख्य रूप से नारी के गुणों को दाम्पत्य जीवन के सुख के लिए अनिवार्य स्वीकार किया है। इस कृति में लेखक ने किशोर और विमला तथा डा0 प्रकाश और मालती के दाम्पत्य जीवन का गहराई से मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर यह सिद्ध किया है,''नारी का रूप उसकी गोरी चमड़ी नहीं, उसके गुण होते है।''(08) कभी–कभी नारी का गोरा रूप विकृत तथा विरूप बन जाता है। अगर नारी में नारी के उचित गुण की कमी रहती है, तो उसका बाह्य सौन्दर्य जीवन को नरक बना देता है और यदि उसमें आन्तरिक गुण रहता है, तब वह शनैः–शनैः विपरीत परिस्थिति को अनुकूल बना लेती है और उसका दाम्पत्य जीवन सच्चे अर्थ में सुखी और आनन्दपूर्ण हो जाता है।

'मधु' वेश्या जीवन पर आधारित रचना है। इसमें भावुकता और आदर्श की मात्रा अधिक समाहित है वेश्या जीवन का मूल कारण पुरुषों तथा दुष्टों का अत्याचार तथा पैसा कमाने की प्रवृत्ति को स्वीकार कर उनके जीवन में नवीन आन्दोलन की आवश्यकता सिद्ध कर नयी दिषा के निर्माण की प्रेरणा लेखक ने दी है तभी मधु (वेश्या) और राजन अन्त में उस समाज के निर्माण के लिए चल देते हैं, ''(जिस) .... समाज में मनुष्य पैसे से ऊपर होगा .....उसमें पैसा मनुष्य को नहीं खरीद सकेगा।'' (09) वे विश्वास और आशा का संबल ले चल पड़ते हैं। आज का समाज पैसा परस्त है और मनुष्य का मूल्य शून्य हो गया है। वे प्रेम का गान करते हैं–

''ले अटल विश्वास दुनियाँ स्वप्न को साकार कर दो प्रेम की अंगडाइयों में
जिन्दगी का सार भर दो।'' (10)

लेखक ने वेश्या–समस्या का निदान मधु की तरह परिवर्तन तथा उक्त कार्य में समाज के सहयोग को ठहराया है। वह क्रान्ति का समर्थन करता है। इसमें यद्यपि बारम्बार क्रान्ति की बात उठायी गयी है तथापि राजन आदि वैसे कट्टर क्रान्तिकारी रूप में नहीं दीख पड़ते।

3. जीवन–दर्शनः आशय एवं उपादेयता

जीवन पर समग्र चिन्तन की विशिष्ठ पद्धति 'जीवन–दर्शन' जिन दो शब्दों के योग से बना है, उनमें 'जीवन' शब्द का अभिप्राय सामान्यतः 'जीवित या चेतन' से है। आशय यह है कि जो मृत या जड़ न हो, उसी को जीवित या चेतन कहा जाता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से मानव

एवं पशु–पक्षी के अतिरिक्त जड़ समझे जाने वाले पेड़–पौधे आदि में भी चेतना होती है, लेकिन व्यावहारिक दृष्टिकोण से जीवन का सम्बन्ध मानव–जीवन से ही होता है। इस प्रकार 'शुद्ध चेतन' या 'जड़ रहित' को ही जीवन कहा जाता है। दर्शन, जिसकी निष्पत्ति 'दृश्' धातु से करण अर्थ में 'ल्युट्' प्रत्यय के योग से होती है, का सामान्य अर्थ है– 'जिसके द्वारा देखा जाए', लेकिन दर्शन शास्त्र में यह एक ऐसा आध्यात्मिक ज्ञान है जो आत्मारूपी इन्द्रिय के समक्ष सम्पूर्ण रूप से प्रकट होता है। (11) अंग्रेजी में दर्शन के लिए प्रयुक्त 'फिलोसफी' शब्द ग्रीक भाषा के जिन दो शब्दों (फिलौस और सोफिया) के संयोग से निर्मित हुआ है, उनका अर्थ है – प्रेम और बुद्धिमत्ता अर्थात् ज्ञान के प्रति प्रेम या सत्य के प्रति प्रेम को ही फिलोसफी कहते हैं। (12)

वस्तुतः जीवन–दर्शन का सम्बन्ध मानव–जीवन से है अर्थात् जब मानव अपनी बुद्धि के सहारे अतीत से प्राप्त संस्कारों द्वारा वर्तमान में उपलब्ध स्थितियों तथा भविष्य की सम्भावनाओं के माध्यम से जीवन के श्रेष्ठ तत्त्वों पर विचार करता है और उन्हें व्यवस्था देता है, तो उसे जीवन–दर्शन कहते हैं। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि मानव बुद्धि जैसे श्रेष्ठ तत्त्वों की प्रधानता होने के कारण संसार के शेष चेतन जगत् से भिन्न एवं उच्च है तथा उसका निरन्तर यही प्रयास रहता है कि वह अतीत के अनुभवों, वर्तमान के ज्ञान एवं भविष्य की सम्भावनाओं के बल पर बुद्धि की उच्चतम सीमा को प्राप्त कर ले। मानव हृदय में संचित अनुभूतियों उसके मस्तिष्क कोणों द्वारा ग्रहीत उसका ज्ञान और भविष्य की संभावनाएँ, मानव को न केवल कर्म करने की प्रेरणा देती है, अपितु प्रत्येक वस्तु के प्रति उसका अपना एक निजी दृष्टिकोण भी निर्मित कर देती है। इसी दृष्टिकोण को 'जीवन दर्शन' नाम से अभिहित किया जाता है। (13)

जीवन के रहस्य की यह झलक उपन्यासकार हमें दो प्रकार से दे सकता है। एक तो नाटककार की भांति पात्रों तथा घटनाओं द्वारा ही, दूसरे बीच–बीच में स्वयं परिचय या आलोचना के रूप में पहले प्रकार में उपन्यासकार केवल मानव–जीवन से सामग्री चुनकर उसे संघटित भर कर देता है और चरित्रों के संवाद तथा कहानी के विकास के द्वारा हमें साधारणतः यह आभास दे देता है कि जीवन को वह किस दृष्टि से देखता है, क्या समझता है। इन छितरे–बिथरे तथ्यों को जुटाकर उनमें से किसी सिद्धान्त को ढूँढ़ निकालना समालोचक का काम होता है। उपन्यासकार को नाटककार की अपेक्षा इस क्षेत्र में अधिक स्वतंत्रता होती है। वह व्यक्त एवं प्रच्छन्न दोनों रूपों में अपनी भावना हम तक पहुँचा सकता है। जहाँ वह इस अधिकार का उपयोग करता है वहाँ वह स्वयं ही अपने इस काल्पनिक जगत् का व्याख्याता बन बैठता है और समालोचक को उसकी भावनाओं को ढूँढ़ निकालने में कठिनाई नहीं होती।

4. यज्ञदत्त शर्मा के उपन्यासों में निरूपित जीवन–दर्शन

श्री यज्ञदत्त शर्मा ईमानदारी, सच्चाई, राष्ट्रीय चेतना और इन्साफ के लेखक हैं। विचारों की दृष्टि से शर्मा जी ऐसे लेखको में है, जो जीवन में स्वस्थ सोपान पाना मनुष्य का मूल लक्ष्य एवं उद्देश्य ठहराते हैं तथा क्रियाशीलता और मंगल–भावना की प्रतिष्ठा अनिवार्य सिद्ध करते हैं। प्रेमचन्द जीवन की यथार्थता एवं सत्यता को प्रस्तुत करने के कर्त्तव्य से कभी च्युत नहीं हुए। उन्होंने ईमानदारी से सत्यों को एवं जीवन और समाज को निरखा–परखा और पाठकों के समक्ष

अपनी कृतियों के माध्यम से प्रस्तुत किया, लेकिन वह इसलिए कि जीवन की यथार्थता से मनुष्य परिचित होकर उस अँधियाली से मुक्ति का प्रयत्न करे, आलोक का पथ पा सके, सात्त्विक विजय प्राप्त कर सके, जिससे मनुष्यता की सुगंध चतुर्दिक फैल सके। प्रेमचन्द और यज्ञदत्त शर्मा में इस दृष्टि से बड़ा साम्य है। वे अपने प्रत्येक उपन्यास में जीवन का पुनीत स्रोत पकड़कर सुधार–निर्माण का प्रयत्न करने में प्रयत्नशील हैं। 'मधु', 'रंगषाला', 'इन्साफ' आदि को इस दृष्टि से देखा जा सकता है। यद्यपि शर्मा जी जीवन की कटु यथार्थता का दामन नहीं छोड़ते, फिर भी उनके उपन्यासों में आदर्शोन्मुख यथार्थ की दिशा स्पष्ट परिलक्षित होती है।

वीरेन्द्र त्रिपाठी ने साहित्य, प्रगति और दिशा पर प्रकाश डालते हुए लिखा है– ''आज के हिन्दी–उपन्यास को हम इसी पृष्ठभूमि में मापने पर यह पाते हैं कि कुछ शक्तियाँ नई उभर रही हैं, जिनमें प्रेमचन्द की परम्परा बढ़ाने की ललक है, जो अपने देश के पात्र लेते है। देश के लोगों की आम भाषा बोलने की सफल चेष्टा करते हैं और अस्सी प्रतिशत जनता के हितों को मुखरित करते है।''(14) निश्चय ही यज्ञदत्त शर्मा ऐसे उपन्यासकार हैं, जो जन–मन के सच्चे उपन्यासकार हैं। एक ओर नागरिक जीवन पर जितना अनुभवपूर्ण मंगल–भावना से संचालित उपन्यास यज्ञदत्त शर्मा जी ने लिखा है, उतनी ही तन्मयता और सच्चाई के साथ उन्होंने ग्रामीण जीवन और उसकी समस्या की यथार्थता को भी उठाया है।

इनके साहित्य में संयम है, काम–वासना का क्रीड़ा–क्षेत्र नहीं। इनके प्रेमी पात्र हृदय में अथाह प्यार का सागर रखते हैं, परन्तु उच्छश्रंखलता नहीं। आज के अधिकांश लेखको में प्रेम की मुक्ति का घृणित चित्र उपस्थित हो रहा है और जो शुद्ध राष्ट्रीय चेतना, संस्कृति एवं मर्यादा के पूर्णतया विपरीत है। शर्मा जी इस दृष्टि से भी सत्साहित्य के सच्चे प्रणेता हैं, जिनका प्यार हिम्मत, धैर्य और शक्ति देता है, निराशा और कामुकता की उत्तेजना नहीं। इस दृष्टि से 'चौथा रास्ता' के अतिरिक्त 'रंगशाला', 'मधु', 'झुनिया की शादी', 'इंसाफ', 'स्वप्न खिल उठा' आदि उपन्यासों को देखा जा सकता है। शर्मा जी के साहित्य में बहन से वासनात्मक सम्बन्ध या मनोविज्ञान के नाम पर खुले वासनात्मक सम्बन्ध का प्रतिपादन नहीं है जैसे अज्ञेय, जैनेन्द्र, यशपाल की रचनाओं में प्रकट है। इस दिशा में सांस्कृतिक चेतना समन्वित प्रेम का गौरवान्वित रूप, वृंदावन लाल वर्मा, हजारी प्रसाद द्विवेदी आदि के साहित्य में पूर्ण व्यापकता से समाहित है। यज्ञदत्त शर्मा भी इस कोटि के उपन्यासकार हैं, वे जहाँ वेश्याओं को चित्रित करते हैं जैसे 'दबदबा' की रामप्यारी, 'मधु' की मधु, 'रंगशाला' की सरोज आदि, वहाँ भी सेक्स की विकृति और खुली नग्नता नहीं है। मेरे मतानुसार आज के संक्रान्तिकालीन युग में ऐसे साहित्य की आवश्यकता है, जो मानवता के स्वस्थ विकास में योगदान दे सके। यज्ञदत्त शर्मा का ऐसा मंगलमय प्रयास है।

यज्ञदत्त शर्मा के साहित्य में नारी और पुरुष के पारस्परिक प्रेम और सहयोग का बड़ा भव्य और मनोरम चित्र है तथा इसका अक्षुण्ण महत्त्व है। 'इंसाफ' का श्यामू भी दृढ़ता से आत्मविश्वास का दीप अपनी स्त्री की सहानुभूति और सहयोग से जला पाता है। शर्मा जी ने स्पष्टरूपेण सिद्ध किया है कि नारी–पुरुष परस्पर पूरक हैं। इसके अभाव में कोई सफल नहीं

हो सकता। 'रंगशाला', 'झुनिया की षादी' आदि को भी इस दृष्टि से देखा सकता है। नारी–पुरुष के सहयोग से वे जीवन में वास्तविक सुख की उपलब्धि मानते हैं। 'दबदबा' का करीम खाँ इसीलिए कहता है–''औरत खुदा बन्देताला की बड़ी भारी नियामत है। घर की दौलत है औरत, खानदान की इज्जत है औरत। आदमी के दिल की राहत है, औरत कुरबानी की इन्तहा है औरत! एक मेरी बीबी को ही देख लीजिए। क्या था मैं उस दिन–एक अदनासा कर्जदार सिपाही था। उसी के मुकद्दर से आज ऐश की जिन्दगी गुजर रही है। घर में जो ऐश है, जो चहल–पहल है, कस्बे में जो इज्जत है, वह सब उसी की बदौलत है।'' (15) , 'इन्साफ' में श्यामू अपनी पत्नी को आदर और प्यार देते हैं और उससे जीवन में स्फूर्ति और ताजगी प्राप्त करते हैं। 'महल और मकान' में भी नारी पुरुष के नैतिक जन–जागरण करने वाली दीख पड़ती है।

इसी भावधारा से उद्वेलित हो जनता के बीच बैठकर ही चित्रकार अपनी कला की साधना करता है। विनय भाई इसी भावना की अभिव्यक्ति स्थल–स्थल पर करते है। ऐसी ही स्थिति में वे साहित्य में मात्र चमत्कार के लिए किये जाने वाले प्रयोग का समर्थन नहीं करते हैं। शर्मा जी कला का आधार जन–जागृति, राष्ट्रीयता की उदात्तता का प्रस्फुरण तथा जन–कल्याण, रचनात्मक भावनाओं का उद्वेलन मानते हैं, जिसमें मानवता बिखरे। इसी धरातल पर सोचते हुए शर्मा जी ने धर्म की कसौटी मानव–सेवा को स्वीकार करते हुए कहा है–''मेरे सामने मानव–समाज की सेवा का धर्म ही मुख्य है। मानव समाज का कल्याण ही धर्म की कसौटी है।'' (16)

शर्मा जी यह भी मानते हैं कि ये पूँजीपति, शोषक, अत्याचारी नेता भी एक दिन समाप्त होगे और नया निर्माण होगा और राष्ट्र की सम्पत्ति पर काम करने वालों का अधिकार होगा। विमला इसी सन्दर्भ में कहती है–''कर्मचारी, तू आज के युग का प्रतिनिधि है, तू आज के युग का कर्णधार है, अब तो तेरे ही चलाये दुनिया चलेगी।'' (17)

वस्तुतः यज्ञदत्त शर्मा मात्र प्रेमचन्द की परम्परा को ही समृद्ध एवं विकसित नहीं करते, प्रत्युत अपनी मौलिकता भी रखते हैं। जहां तक प्रेमचन्द के साहित्य का सम्बन्ध है। उसके कई तत्त्व शर्मा जी के साहित्य में प्राप्य हैं –

क. नगर से ग्राम की और बढ़ने की प्रवृत्ति **ख.** ग्रामीण पात्रों को साहित्य में स्थान देने का प्रयत्न **ग**.समाज–सुधार की भावना **घ**. राष्ट्रीय चेतना **ड**. आदर्शोन्मुख यथार्थवाद **च.**आम भाषा का प्रयोग

इसके अतिरिक्त यज्ञदत्त शर्मा इनसे आगे की समस्याओं एवं तत्त्वों को ग्रहण करते हैं। वे तत्त्व इस प्रकार हैं –

क. मानव–जीवन में सहयोगी भावना का महत्त्व **ख**. समाज और राष्ट्र के नवनिर्माण के लिए योजनाओं का प्रस्तुतिकरण **ग**. साहित्य रचना में नयी–नयी तकनीकों का प्रयोग, परन्तु कथ्य का संतुलन (तकनीक प्रधान वस्तु न हो, इस तथ्य पर ध्यान) **घ.** देश के उन्नत भविष्य की कल्पना **ड.** ग्रामीण जीवन की सामयिक एवं आधुनिक समस्याओं का स्पष्टीकरण।

यह भी ध्यातव्य है कि प्रायः प्रेम उपन्यासों का प्रधान विषय होता है, परन्तु शर्मा जी के उपन्यासों के साथ यह बात नहीं है। प्रेम (Romance) इनमें है, परन्तु वह मुख्य बन कर नहीं।

इसके साथ ही उनके उपन्यास में व्यवहृत प्रेम भारतीय संस्कृति की श्रृंखला को तोड़ता नहीं, उनमें आबद्ध होकर चलता है। इश्क (Romance) नहीं, गठबन्धन होता है और वह भी भारतीय संस्कृति के आधार पर इनके साहित्य में करुणा की भी अजस्र धारा बहती दीख पड़ेगी।

उपन्यासकार यज्ञदत्त शर्मा के जीव–जगत् व प्रकृति के प्रति उत्तम ज्ञान से उनकी रचनाओं में गांभीर्य एवं जनमानस को प्रभावित करने की क्षमता विकसित हुई है। इन्होंने अपनी वैचारिक सामग्री को जिस सीमा तक कलात्मकता प्रदान की है, उसी सीमा तक रचना का मूल्य भी स्थायी सिद्ध होता है। मानव–मूल्य की स्थापना इनकी रचनाओं का मुख्य उद्देश्य है। इन्होंने जीवन के श्रेष्ठ मूल्यों को विवेचित–विश्लेषित कर पाठकों को नव–प्रकाश दिया है। इनके द्वारा सूक्ष्म से सूक्ष्म आन्तरिक व बाह्य वृत्तियों और परिस्थितियों का भी पूरी स्वतंत्रता से आकलन–विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार यज्ञदत्त शर्मा की रचनाओं में निरूपित उद्देश्य एवं जीवन दर्शन को समझना ही वास्तव में अपने देश, समाज और उसके भीतर पर्यावरण के रूप में विचार–शक्तियों को समझना है। वस्तुतः इन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से पाठक की अन्त वृत्तियों के विकास के साथ–साथ ठोस तथा गंभीर अनुभूति–प्रदान की है, जो जीवन के आनन्द की उपलब्धि में सहायक सिद्ध होती है।

संदर्भ ग्रंथ

1. *साहित्यिक निबन्ध* (साहित्यकार का दायित्व)–सं0 डॉ0 त्रिभुवन सिंह, एच चन्द्र एंड कंपनी, दिल्ली–1968 पृष्ठ–**561**
2. *काव्य प्रकाश (1/2) . मम्मटाचार्य,* हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वितीय संस्करण–2000 पृष्ठ– **5**
3. रामचरितमानस (बालकाण्ड) – गोस्वामी तुलसीदास,गीता प्रेस, गोरखपुर–2010 पृष्ठ–**46**
4. व*ाड़्मय–विमर्श* – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिंदी साहित्य कुटीर, वाराणसी, चतुर्थ संस्करण–1980 पृष्ठ–**260**
5. *आधुनिक साहित्य* – डॉ0 प्रतापनारायण टंडन, विद्यामंदिर प्रकाशन, लखनऊ–1956 पृष्ठ– **34**
6. *दबदबा,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाशन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**18**.
7. *चौथा रास्ता,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाशन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**59**
8. *रूप–बिरूप,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाशन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**67**
9. *मधु,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाषन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**75**
10. *मधु,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाषन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**76**
11. *भारतीय दर्शन* – डॉ0 राधाकृश्णन,सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली–1944 पष्ठ–38
12. 'The word Philosophy comes from two Greek words meaning *'Love & Wisdom' so Philosophy originally ment*, Love of wisdom, Love of truth'- Introduction to Philosophy by Max Pasembery Philosophical library, New York, P**. 3**

13. *बिहारी–व्यक्तित्व एवं जीवन–दर्शन* – रमेशचन्द्र गुप्त, आत्माराम एंड संस दिल्ली–सं0 1966 पृष्ठ–**116.117**
14. *हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ* – डॉ0 शशिभूषण सिंघल, प्रेम प्रकाशन मंदिर, दिल्ली–स0–2006 पृष्ठ–**112**
15. *दबदबा,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाशन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**88**
16. *भारत सेवक,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाशन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**69**
17. *निर्माणपथ,* यज्ञदत्त शर्मा– साहित्य प्रकाशन–दिल्ली–1997 पृष्ठ–**5.6**